

॥ श्रीः ॥
चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला

440



म०म० श्रीविष्णुशर्मविरचितं

पञ्चतन्त्रम्

परीक्षोपयोगिन्याऽतिविशदया 'अभिनवराजलक्ष्मी'समाख्यया
संस्कृतटीकया, विस्तृतया भाषाटीकया च विराजितम्

संस्कृतटीकाकारः
श्रीगुरुप्रसादशास्त्री
व्याकरणाचार्यः, न्यायाचार्यः, दर्शनाचार्यः

भाषाटीकादिपरिष्कारकारः
आचार्य श्रीसीतारामशास्त्री
एम.ए., व्याकरणाचार्यः, 'साहित्यरत्नम्' 'राजशास्त्री'

सम्पादकः
प्रो० बालशास्त्री
अध्यक्षः, व्याकरणविभागः
संस्कृतविद्याधर्मविज्ञानसंकायः
काशीहिन्दूविश्वविद्यालयः, वाराणसी



चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

॥ श्रीः ॥

पञ्चतन्त्रस्य विषयसूची

विषयः

पृष्ठसंख्या | विषयः

पृष्ठसंख्या

कथामुखम्

| | | |
|--------------------------------|-------|----------------------------------|
| मङ्गलाचरणम् | १ - ३ | साराऽसारविवेकोपादेयता |
| मूर्खपुत्रनिन्दा | ४ | विष्णुशर्मप्रतिज्ञा |
| रूपादिगुणयुक्तमूर्खपुत्रनिन्दा | ५ | विष्णुशर्मप्रतिज्ञाया राजो हर्षः |
| अभक्तमूढपुत्रनिन्दा | ६ | नीतिशास्त्रपठनफलश्रुतिः |
| मूर्खपुत्रजननीनिन्दा | ७ | |

मित्रभेदः नाम प्रथमं तन्त्रम्

सिंहवृषभयोः स्नेहस्य जम्बुकेन विनाशः १३

सिंह-वृषभ-जम्बुककथारम्भः

| | | | |
|--------------------------------|----|--------------------------------------|----|
| धनप्रशंसा | १४ | पीनता | २५ |
| धनिप्रशंसा | १४ | दैव(भाग्य)स्य वलवत्त्वम् | २६ |
| धनप्रभाववर्णनम् | १५ | पिङ्गलकसिंहस्य भयाच्चतुर्मण्डला- | |
| वित्तस्य सर्वकार्यसाधकता | १६ | वस्थानम् | २७ |
| अर्थस्वभाववर्णनम् | १६ | करटक-दमनक-शृगालमन्त्रणा | २८ |
| धनोपार्जनोपायाः | १७ | अव्यापारे (अनवसरे) व्यापारे | |
| वाणिज्यप्रशंसा | १७ | नोचितः | २८ |
| सप्तविधं वाणिज्यम् | १९ | (१) कीलोत्पाटिवानरकथा | २८ |
| गान्धिकपण्यप्रशंसा | २० | सुहृदामुपकाराय, शत्रुदमनाय | |
| निक्षेपव्यवहारस्तुतिः | २० | च राजसेवा कर्तव्या | ३० |
| गौष्ठिकश्रेष्ठिस्वभावाख्यानम् | २१ | परोपकारपरायणजनस्तुतिः | ३१ |
| किराट(वैश्य)स्वभावः | २१ | विद्याशौर्यादिना प्रथितस्यैव वास्तवं | |
| दूरदेशान्तरव्यापाराल्लाभः | २२ | जीवनम् | ३१ |
| सञ्जीवकवृषभचरणभङ्गः | २३ | दीनेषु, भृत्यादिषु च निर्दयस्य | |
| स्वल्पस्य कृते भूरिनाशो नोचितः | २४ | जीवनं वृथा | ३२ |
| सञ्जीवकवृषस्य दैवाद्रक्षितस्य | | कापुरुषनिन्दा | ३३ |
| | | येन लोके प्रसिद्धिर्न प्राप्ता तेन | |
| | | स्वमातुर्यैविनमेव नाशितम् | ३३ |

| विषयः | पृष्ठसंख्या | विषयः | पृष्ठसंख्या |
|---|-------------|--|-------------|
| परिवर्त्तनि संसारे धनादिना श्रेष्ठ एव सुजातः | ३३ | राजवल्लभः कीदृशेन व्यवहारेण भवति | ४६-४९ |
| परोपकारिणस्तृणादेरपि जन्म सफलम् | ३४ | नीतिविदां धीमतां कौशलम् | ५० |
| सज्जनप्रशंसा | ३४ | अनवसरे वचनं न प्रयोक्तव्यम् | ५१ |
| महापुरुषाणां जनन्या अपि प्रशंसा भवति | ३५ | राजां दुराराध्यता व्यालाकीर्ण- पर्वतवत् | ५१ |
| अप्रकटितशक्तिर्महानपि लोकै- स्तिरस्क्रियते । | ३५ | राजानो दूरतोऽपि पश्यन्ति | ५३ |
| अपृष्ठेन, अप्रधानेन च न किमपि वक्तव्यम् | ३६ | राजा स्वल्पेनाऽप्यपकारेण क्रुध्यति | ५३ |
| यत्र वचः सफलं स्यात्त्रैव वचनं प्रयोक्तव्यम् | ३६ | परवशीकरणोपायः | ५५ |
| अप्रधानोऽपि राज्ञः सेवया प्रधानतां लभते | ३६ | अमन्त्रतन्त्रं वशीकरणम् | ५६ |
| राजां, स्त्रीणां, लतानां च आसन्नभजनं स्वभावः | ३७ | तृणेनापि कदाचित्कार्ये भवति | ५८ |
| राजाश्रयप्रशंसा | ३८ | स्थानेष्वेव भृत्यादयो नियोक्तव्याः | ५९ |
| विदुषां राजैव आश्रयः | ३९ | असत्कृतः सेवकः स्वामिनं त्यजति | ६० |
| राजप्रसादफलं हस्त्यश्वादिसम्पत्तिः | ४० | अविवेकिप्रभुनिन्दा | ६१ |
| परेङ्गितज्ञानमेव बुद्धेः फलम् | ४१ | परीक्षकाऽभावे रत्नानां मूल्यं न प्रवर्द्धते | ६२ |
| सुवर्णरत्नपूर्णो पृथिवीं शूरादय- स्त्रय एव विचिन्वन्ति | ४२ | पार्थिवस्य भृत्यानां च परस्परापेक्षता | ६३ |
| ग्राह्यवाक्यराजसेवकद्वारैव | ४३ | राज्ञो, भृत्यानां च परस्परं व्यवहारः | ६४ |
| राजद्वारप्रवेश उचितः | ४४ | राजा कुलीनाः, कुशलाश्च भृत्या निकटे स्थाप्याः | ६५ |
| सेव्यराजनिर्देशः | ४४ | राजयोग्या भृत्याः | ६६ |
| त्याज्यो नृपतिः | ४५ | त्याज्या भृत्याः | ६८ |
| राजमातृ-कुमार-सचिव-पुरोहितादौ | ४५ | गुणिनः स्वगुणैरेव प्रसिद्धिं गच्छन्ति | ६८ |
| राजवद् व्यवहारः | ४५ | राज्ञः स्वल्पमपि कार्ये सभामध्ये न वक्तव्यम् | ७१ |
| | | षट्कणो मन्त्रो भिद्यते | ७१ |

| विषयः | पृष्ठसंख्या | विषयः | पृष्ठसंख्या |
|--|-------------|---------------------------------|-------------|
| मित्रादिषु स्वदुःखनिवेदनेन | | स्त्रीणां वास्तवं प्रेम | |
| जनः सुखी भवति | ७४ | केनापि सह न भवति | १०५ |
| कातरः शब्दमात्राद्विभेति | ७५ | स्त्रीस्वभावाख्यानम् | १०६ |
| धीरस्वभावाख्यानम् | ७६ | देश-काल-पुरुषाद्यभावे एव | |
| कातरस्वभावः | ७७ | स्त्रीणां सतीत्वं भवति | १०७ |
| (२) गोमायुद्धुभिकथा | ७८ | स्त्रीस्वभावः | १०८ |
| विचार्य शनैः कार्यं कुर्वणो | | दुर्जनमायाजालपतिः कः | |
| न सन्तापं प्राप्नोति | ७९ | पुमान् क्षेमेण गच्छति | ११० |
| स्वामिसदृशा एव भृत्या भवन्ति | ८१ | दुष्टद्यूतकारादिस्वभावः | ११२ |
| सुभृत्यचेष्टा | ८२ | कापुरुषोऽपि राजसेवकः परैः | ११३ |
| विश्वासेनैव बलवन्तोऽपि दुर्बलैर्हन्यन्ते | ८४ | पराभवं न याति | ११४ |
| शत्रोः कदापि विश्वासो न कार्यः | ८५ | खलानां, तुलायाश्च सदृशी चेष्टा | ११५ |
| कस्यापि विश्वासो न कार्यः | ८५ | दन्तिलस्य पुना | |
| व्यसनार्त एव राजा मन्त्रिणां | | राजसत्कारप्राप्तिः | ११७ |
| वाक्ये प्रवर्त्तते | ८६ | सिंहवृषयोः समागमः | ११८ |
| विपत्तिरहितो राजा मन्त्रिणं | | सज्जनसङ्गतिप्रशंसा | १२० |
| नाभिवाञ्छति | ८७ | फलहीनं राजानं भृत्यास्त्यजन्ति | १२१ |
| देवतुल्यो राजा, सर्वदेवमयश्च | ८८ | भृत्यानां वृत्तिभङ्गो न कार्यः | १२२ |
| महान् महत्स्वेव स्वविक्रमं दर्शयति | ८९ | प्रायः सर्वेषां भक्ष्यभक्षक- | |
| बुद्ध्या कार्यं साधु सिद्ध्यति | ९१ | भावो लोके दृश्यते | १२३ |
| राजशक्तिं दुर्जेयम् | ९३ | दुष्टानामभिप्राया न सिद्ध्यन्ति | |
| सुपरीक्षितमन्त्रिप्रशंसा | ९६ | तेनेदं जगद्वर्तते | १२४ |
| राजसम्मानममृतोपमम् | ९७ | शिवगृहेऽपि कलहः | १२५ |
| (३) दन्तिलगोरम्भकथा | १०० | उन्मत्तस्य राज्ञो मन्त्रिणोऽपि | |
| नृपतेर्जनपदानां च | | निन्दां प्राप्नुवन्ति | १२७ |
| हितकर्ता दुर्लभः | १०१ | (४) आषाढभूति-जम्बुक- | |
| स्वप्नवाक्यान्मत्त्यानां चित्तगतं | | दूतीकथा | १२८ |
| रहस्यं ज्ञायते | १०४ | अर्थानां राक्षणादौ दुःखम् | १२९ |

| विषयः | पृष्ठसंख्या | विषयः | पृष्ठसंख्या |
|---|-------------|---|-------------|
| निःस्पृहो नाधिकारी भवति, स्पष्टवक्ता च न वञ्चकः | १३० | सुगूढदम्भस्यापि कदाचित्कार्य- कारिता दृष्टा | १७३ |
| पूर्वे वयसि यः शान्तः स एव वस्तुतः शान्तः | १३१ | (५) मिथ्या विष्णुकौलिककथा १७४ | |
| शिवमन्त्रेण दीक्षितो भस्म- लिप्ताङ्गः शिवतुल्यः | १३२ | मणि-मन्त्रौषध-बुद्धीना- मसाध्यं किमपि नास्ति | १७७ |
| शिवपूजनमहिमा नृपति-यति-विप्रादीनां | १३३ | कामिनो मनोरथाः | १७८ |
| विनाशकारणानि | १३४ | विरहातुरकौलिककृतः कपोलोपालम्भः | १७९ |
| आषाढभूतिदेवशर्मचरितम् | १३५ | कौलिकस्य विष्णुवेषेण | |
| कौलकभार्याचरितम् | १३९ | कन्यान्तःपुरप्रवेशः | १८० |
| अतिथिपूजामाहात्म्यम् | १४० | कौलिककृतं राजकन्याप्रधर्षणम् | १८२ |
| असतीकुलटास्त्रीस्वभावः | १४२-४४ | कञ्चुकिप्रभृतिरक्षक- राजपुरुषाणां सन्देहः | १८४ |
| मद्यपदशा | १४६ | स्वकन्याशीलखण्डनं श्रुत्वा | |
| स्त्रीचरित्रम् | १४७ | राजश्विन्ता | १८५ |
| व्यभिचारिणीस्वभावः | १४९ | राजकृतं स्त्रीविगर्हणम् | १८६ |
| दूतीचरितम् | १५० | दुहितरो विपद एव मूलम् | १८६ |
| व्यभिचारिणीचरितम् | १५३ | राज्ञीकृतं स्वपुत्रीतर्जनम् | १८७ |
| मनुष्याणां वृत्तस्य सूर्यादियः चतुर्दश (१४) साक्षिणः | १५३ | राज्ञपुत्रीकृतं स्वस्य विष्णु- परिग्रहत्वकथनम् | १८८ |
| स्त्रीणां मायापटुता | १५४ | राज्ञया राजे विष्णुकृतस्य | |
| स्त्रीस्वभावनिन्दा | १५६-१६२ | स्वकन्यापरिणयस्य कथनम् | १८९ |
| व्यभिचारिणीचरित्रम् | १६३-६४ | राज्ञो विष्णुजामातृप्रभावेण | |
| चौराद्यपराधिनां चिह्नानि | १६६ | सर्वराजवशीकरणाशा | १९० |
| निर्दोषचिह्नानि | १६७ | राज्ञः पुत्रीमुखेन मिथ्या विष्णोः | |
| ब्राह्मण-स्त्री-बालादयो न वध्याः | १६९ | कौलिकस्य स्वशत्रुवधस्य प्रार्थना १९१ | |
| बुद्धेर्महात्म्यम् | १७० | शत्रुभी राज्ञो राज्यस्य प्रायो | |
| विषमेऽपि काले धैर्यं न त्याज्यम् | १७२ | हरणम् | १९२ |
| उद्योगिप्रशंसा, उद्योगमहत्त्वम् | १७२ | कौलिकचिन्ता | १९३ |

विषयः

पृष्ठसंख्या

विषयः

पृष्ठसंख्या

गो-ब्राह्मण-स्वामि-स्थान-स्त्री-

बकोक्तिसमनन्तरं कुलीरेण

रक्षार्थे प्राणत्यागस्य माहात्म्यम् १९४

बकग्रीवाकर्त्तनम्

२११

कौलिकस्य राजे सन्देशः १९५

कुलीरकस्य सरोवरे पुनः प्राप्तिः,

भगवतो नारायणस्य गरुडस्मरणम् १६६

मत्स्यादिभ्यस्तथ्यकथनं च

२१२

विष्णोरंशेन कौलिके प्रवेशः १९७

काकीधृतस्वर्णदोरकेण

विष्णुप्रभावात्कौलिककृतः

कृष्णसर्पस्य विनाशः

२१४

राजशत्रुसेनाविनाशः १९८

भासुरकसिंह-शशककथा

२१५

कौलिकरहस्यभेदः १९९

शनैःशनै राज्योपभोग एव श्रेयान् २१७

राजा प्रीतेन कौलिकाय

मन्त्रयुक्तेन विधिनैव भूमिः

स्वकन्यादानम् २००

फलदा भवति

२१७

(६) काकी-स्वर्णसूत्र-कृष्णसर्प-

प्रजापालनं यशस्यं धनादिवर्द्धनञ्च २१८

कथा

प्रजापालनविधिः

२१९

सर्पयुक्तगृहे वासो मृत्युरेव

प्रजापालनादेव राजां

शत्रोरुपायेन जय एव शोभनः २०१

धनधान्यादिसमृद्धयः

२२१

(७) लुब्धक-कर्कटककथा २०३

सिंहशशकसंवादः

२२२

बककृतं मत्स्यादिभ्यजननम् २०४

भासुरकसिंहस्य शत्रुसिंहोपरि

यदा शनी रोहिणीशकटं भिनति,

युद्धाय यानम्

२२५

तदा भुवि द्वादशवार्षिकी

भूरिफललाभसम्भवे एव

अनावृष्टिर्भवति २०५

राजा योद्धव्यम्

२२६

शनि-भौम-चन्द्रै रोहिणी-

दुर्गमाहात्म्यम्

२२७

शकटभेदे फलम् २०६

दुर्गहीनो राजा शत्रुवशं गच्छति

२२८

बकेन जलचराणां प्राणरक्षाया

रोगवज्जातमात्र एव शत्रुः संहर्तव्यः २२८

उपायस्य कथनम् २०८

उपेक्षितो रोगः, शत्रुशाऽसाध्यतां

२२९

बकपृष्ठे जलचराणामारोहणम् २०९

याति

बकेन जलचराणामन्यत्र

आत्मनः शक्तिमनवेक्ष्य शत्रो-

नयनं, भक्षणञ्च २१०

रूपरि प्रचलन् राजा विनश्यति

२३०

कुलीरककृता बकप्रार्थना २१०

शशकृतकपटोपायेन भासुरक-

कुलीरकनयनम् २१०

सिंहस्य कूपपतनाद्विनाशः

२३२

कुलीरकप्रश्नः २१०

'बुद्धिर्यस्य बलन्तस्य'

२३३

| विषयः | पृष्ठसंख्या | विषयः | पृष्ठसंख्या |
|------------------------------------|-------------|------------------------------------|-------------|
| पिङ्गलकसिंहदमनकयोरालापः | २३४ | येषां गृहे कार्यार्थं सुहृद् | |
| एकसचिवपराधीनो राजा नश्यति | २३५ | आयान्ति ते धन्याः | २५९ |
| न सोऽस्ति पुरुषो राजां यो | | सेवावृत्तिगर्हणम् | २६० - २६३ |
| न कामयते श्रियम् | २३७ | नृपकार्यमन्त्रादिविघातकस्य | |
| राजप्रियः पुरुषो हि श्रीमान् भवति | २३८ | सेवकस्य नरकप्राप्तिः | २६३ |
| पूर्वमात्मना गुणवत्तया स्तुतस्य | | विश्रम्भघाती नरकमाप्नोति | २६४ |
| स्वयमेव निन्दा न कार्या | २३९ | मित्रद्रोहरूपपापस्य | |
| विषवृक्षोऽपि संवद्धर्य | | प्रायश्चित्तमेव नास्ति | २६५ |
| स्वयं न च्छेद्यः | २४० | सर्वोपायैः शत्रुहन्तव्यः | २६६ |
| पूर्व प्रणयं विधाय तद्विघातो | | प्रायः स्नेहशून्यो राजा भवति | |
| न विधेयः | २४१ | राजां कोऽपि प्रियो नास्ति | २६७ |
| अपकारिष्वपि यः साधुः | | तुल्ययोरेव मैत्री, विवादश्च युक्तः | २६८ |
| स एव साधुः | २४२ | समानशीलव्यसनेषु सख्यं भवति | २६९ |
| राजा मन्त्रिषु सर्वथा भरो | | नरपतेः सेवा सदाऽशङ्किनी | २७० |
| नैव विधेयः | २४२ | सेवाधर्मः परमगहनो- | |
| संवासाद् गुणदोषावप्तिः | २४४ | योगिनामप्यगम्यः | २७१ |
| अविज्ञातशीलाय वासः | | राजसेवका अन्यस्य प्रभुकृतं | |
| प्रतिश्रयश्च न देयः | २४५ | प्रसादं न सहन्ते | २७२ |
| (९) मन्दविसर्पिणीयूका- | | गुणवत्तरपात्रेण गुणिनां | |
| अग्निमुखमत्कुणकथा | २४६ | गुणाश्छाद्यन्ते | २७२ |
| अतिथिपूजनं गृहस्थानां धर्मः | २४७ | (११) उष्ट्रकाक-द्वीपि- | |
| नृपरङ्ग्योस्तुल्यं जिह्वासौख्यम् | २४८ | शृगालकथा | २७४ |
| उदरार्थमयं लोकः सर्वं पापं विधत्ते | २४९ | गृहे प्राप्तं शत्रुमपि नैव हन्यात् | २७४ |
| उपदेशेन स्वभावोऽन्यथा | | अभयप्रदानप्रशंसा | २७८ |
| कर्तुं न शक्यते | २५१ | प्रधानस्य पुरुषस्य | |
| (१०) चण्डरवशृगालकथा | २५३ | रक्षा सर्वथा कर्तव्या | २८० |
| श्रियमिच्छञ्जनोऽविज्ञातकुल- | | भृत्यस्य पश्यतः स्वामी यदि | |
| शीलस्य न विश्वसेत् | २५५ | आपदं प्राप्नुयात्तदा | |
| चण्डरवशृगालवधः | २५८ | स भृत्यो नरकं व्रजेत् | २८१ |

| विषयः | पृष्ठसंख्या | विषयः | पृष्ठसंख्या |
|--|-------------|--|-------------|
| स्वाम्यर्थे प्राणत्यागः श्रेयान् अभक्ष्यभक्षणं नैव कार्य प्राणैः कण्ठगतैरपि | २८२ | तेजस्वी बलवान् भवति न तु स्थूलशरीरः | ३१२ |
| स्वाम्यर्थे मृतानामक्षयः स्वर्गे वासः कीर्तिश्च लोके स्वाम्यर्थे मृतो योगिजनगतिं | २८४ | (१५) चटकदम्पतिकुञ्चरकथा नष्टं मृतमतिक्रान्तं | ३१४ |
| प्राप्नोति अशुद्धप्रकृतौ राज्ञि जनता नानुरज्यते | २८५ | नानुशोचन्ति पण्डिताः आपदि सहायक एव सुहृद् | ३१६ |
| उपजापविदां कर्णजापै- र्मनुष्याणां चेतांसि हियन्ते अहो खलभुजङ्गस्य | २८७ | विद्वद्विश्विन्तिता नया न विकल्पन्ते | ३१८ |
| विपरीतो वधक्रमः उत्पथप्रतिपन्नस्य | २८८ | निर्बलः सबलं गच्छन् विनश्यति सुहृदि दुःखं निवेद्य जनः | ३२० |
| गुरोरपि परित्यागो विधीयते रणे प्राणपरित्यागा- | २८९ | सुखी भवति राजा यथावत्प्रजा रक्षणीयाः | ३२२ |
| त्वर्गादिप्राप्तिः | २९१ | यो यस्य गुणान्न वेत्ति तेन तस्य सेवा न कर्तव्या | ३२३ |
| (१२) टिद्विभ- समुद्रकथा | २९२ | भक्तं भृत्यं राजा नावमानयेत् राजा सम्मानिता भृत्याः प्राण- | ३२४ |
| पराभवभयात्स्वस्थानं नैव त्याज्यम् | २९६ | रपि समुपकुर्वन्ति भृत्यापराधजो दण्डः | ३२९ |
| (१३) काष्ठभ्रष्टकच्छपकथा | २९८ | स्वामिनो भवति | ३३० |
| विधुरेऽपि काले धैर्यं न त्याज्यम् | ३०० | पुरुषेण सर्वथा उद्यमः कर्तव्यः | ३३१ |
| (१४) अनागतविधात्रादि- कच्छपत्रयकथा | ३०४ | आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत् येन केनाप्युपायेन दीनमात्मान- | ३३३ |
| विद्यमानगतिर्देशभङ्गं कुलक्षयं च न पश्येत् | ३०५ | मुद्धरेत् उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः | ३३४ |
| अरक्षितं तिष्ठति दैवरक्षितम् | ३०८ | सुखस्थं दुःखमार्गे यः पातयति स नरकं गच्छति | ३३५ |
| आत्मनः परस्य च शक्तिमविदित्वा शत्रोरभिमुखं गच्छन् वह्नौ | ३१० | जातमात्रं शत्रुं व्याधिं च प्रशमं नयेत् अपकारिणं हन्यात् | ३३६ |
| पतञ्जलवन्नशयति | | | ३३७ |
| | | | ३३९ |

| विषय: | पृष्ठसंख्या | विषय: | पृष्ठसंख्या |
|---------------------------------|-------------|----------------------------------|-------------|
| (१६) चतुरकसिंहशृगालकथा | ३४१ | श्रद्धाविहीनस्य प्रोक्तमरण्य- | |
| बुद्धिमतां बुद्धेरवध्यं | | रुदितोपमं भवति | ३६९ |
| किमपि नास्ति | ३४३ | पुत्राश्वतुर्विधा भवन्ति | ३७१ |
| धर्मार्थं यततामपि यदि विपदः | | (१९) धर्मबुद्धि-पापबुद्धिकथा | ३७२ |
| स्युस्तदाऽपि विशेषान्नयः | | देशान्तरगमनप्रशंसा | ३७३ |
| (उद्योगः) कार्य एव | ३५१ | वित्तं स्वल्पमपि कस्यचिदपि | |
| यद्भावि तद्भवत्येव | ३५२ | न दर्शयेत् | ३७५ |
| महतः क्षयं लब्ध्वा नीचः | | वित्तवान् सर्वत्र भक्ष्यते | ३७५ |
| प्रसिद्धिं गच्छति | ३५३ | परदारान् मातृवत्पश्येत् | ३७७ |
| राजगृहं वारिधिवद् दुर्गमं भवति | ३५४ | साक्षि-लेख्याद्यभावे एव दिव्यं | |
| सञ्जीवकपिङ्गलकयोर्युद्धम् | ३५५ | प्रयोज्यम् | ३७८ |
| दण्डः पापीयान् भवति, अतस्तं | | साक्षिसत्त्वे दिव्यं नैव योज्यम् | ३७८ |
| पश्चादेव योजयेत् | ३५७ | आदित्यचन्द्रादयो नरस्य | |
| साम्ना कार्यसिद्धिसम्भवे दण्डो | | वृत्तं जानन्ति | ३८० |
| न योज्यः | ३५८ | (२०) मूर्खबक-नकुलकथा | ३८२ |
| सामप्रयोगप्रशंसा | ३५८ | शत्रुस्तथा प्रबोध्यो यथा स | |
| पञ्चविधो हि मन्त्रो भवति | ३५९ | गते पतति | ३८३ |
| मन्त्रिणां भिन्नसन्धाने एव | | मयूरो निजच्छिद्रं नृत्यन् | |
| प्रज्ञा व्यज्यते | ३६० | प्रदर्शयति | ३८५ |
| नीचः परकार्यं नाशयितुमेव शक्तो | | (२१) लौहतुला-वणिक- | |
| न प्रसाधयितुम् | ३६१ | पुत्रकथा | ३८६ |
| नीचजनानुवर्त्तिराजदशावर्णनम् | ३६१ | कार्यकारणभावादिनैव कस्य- | |
| नाऽनाम्यं नमते दारु, नाऽशिष्या- | | चित्कोऽपि प्रियं करोति | ३८८ |
| योपदिश्यते | ३६३ | अत्यादरो यत्र भवेत्तत्र शङ्का | |
| (१७) सूचीमुख-वानरयूथकथा | ३६४ | प्रकर्तव्या | ३८९ |
| मूर्खं व्यसनान्वितं नाऽलापयेत् | ३६५ | मूर्खाणां पण्डिता द्वेष्या, | |
| मूर्खाणामुपदेशः प्रकोपायैव, | | निर्धनानां महाधनाः | ३९२ |
| न तु शान्तये | ३६६ | (२२) नृपसेवकमूर्खवानरकथा | ३९३ |
| (१८) चटकदम्पति-वानरकथा | ३६७ | (२३) पण्डितचौरकथा | ३९४ |

| विषयः | पृष्ठसंख्या | विषयः | पृष्ठसंख्या |
|--------------------------------------|-------------|---------------------------|-------------|
| असती सलज्जा भवति | ३९५ | कश्च नरकं यान्ति | ३९९ |
| मृत्योर्बिभेषि किं बाले न | | प्राणद्रोहं कुर्वन् वध्यः | ४०१ |
| स भीतं विमुच्चति | ३९७ | निर्दयो राजा त्याज्यः | ४०१ |
| गवार्थे, ब्राह्मणाद्यर्थे च प्राणां- | | वेश्याङ्गंनेव राजनीति- | |
| स्त्यजन् परमां गतिं याति | ३९८ | रनेकरूपा भवति | |
| मित्रद्रोही, कृतघनश्च, विश्वासघात- | | गतासून् पण्डिता न शोचन्ति | ४०२ |
| | | | ४०३ |

मित्रसम्प्राप्तिर्नाम द्वितीयं तन्त्रम्

| काक-कूर्म-मृग-मूषक कथा | इति बृहस्पतेनीतिः | |
|-------------------------------|-------------------|-------------------------------|
| श्लाघ्यो वृक्षः | ४०६ | साप्तपदीनं हि सख्यं सतां भवति |
| लघुपतनककाकस्य प्रातव्याधि- | | प्रीतिलक्षणम् |
| दर्शनम् | ४०७ | दानं प्रीतिविवर्द्धनम् |
| मूर्खा जिह्वालौल्येन वध्यन्ते | ४०९ | वायसमूषकवार्तालापः |
| आसन्नविपत्तिकाले मतिमता- | | धन्या देशभङ्गं, कुलक्षयं च न |
| मपि मतिर्हीयते | ४१० | पश्यन्ति |
| अभाव्यं नैव भवति, भाव्यन्तु | | विद्वत्वं, नृपत्वं च नैव |
| स्वयमेव भवति | ४१३ | कदाचन तुल्यम् |
| दुर्ग्रीशंसा | ४१६ | गगनगतिविशेषनामानि |
| सुहृत्प्रशंसा | ४१७ | अज्ञातेन सह सङ्गतिर्न कार्या |
| दैववर्णनम् | ४१९ | (१) हिरण्यकताम्रचूडकथा |
| विश्वासः सम्पदां मूलम् | ४२२ | प्रणयिप्रसादनप्रकारप्रदर्शनम् |
| सुशीलभृत्यरक्षणं राज्ञो धर्मः | ४२३ | नरकं याति पुरोहितः |
| परिपूर्णेनापि सहदः कर्तव्याः | ४२५ | मठाधिपस्तु सद्य एव |
| समानैरेव मैत्री युक्ता | ४२७ | निरयगामी भवति |
| वैरिणा सन्धिर्न कार्यः | ४२८ | वित्तं तेजो वर्द्धयति |
| केनापि सह वैरं न कार्यम् | ४३० | (२) शापिडलीतिलकल्क- |
| सकृददुष्टं मित्रं न सन्धेयम् | ४३१ | विक्रयकथा |
| सज्जन-दुर्जनमैत्रीवर्णनम् | ४३२-४३३ | दानं यथाशक्ति देयम् |
| कस्यापि विश्वासो न कार्य | | (३) पुलिन्दसूकरसर्पादिकथा |

| विषयः | पृष्ठसंख्या | विषयः | पृष्ठसंख्या |
|----------------------------------|-------------|------------------------------------|-------------|
| स्वोपार्जितं धनं शनैः | | स्त्रीवाक्याद्गुशाहतपुरुष- | |
| शनैर्भोत्तव्यम् | ४६७ | दशावर्णनम् | ५२३ |
| आयुर्वित्तविद्याकर्ममृत्यवो | | उपार्जितस्य धनस्य दानमेव | |
| गर्भस्थस्यैव धात्रा सूज्यन्ते | ४६८ | रक्षणम् | ५३० |
| विबुधा दृष्टवैव जनं तत्साराऽ- | | सन्तोषप्रशंसा | ५३२ |
| सारतां जानन्ति | ४७२ | दानप्रशंसा | ५३४ |
| दैवगर्हणम् | ४७४ | हितवक्ता लोके दुर्लभः | ५३६ |
| धनेनैव लोको बलवान् भवति | ४७७ | शत्रुदर्शने स्वरक्षणस्य द्वावुपायौ | ५३९ |
| निर्धनदशावर्णनम्, | | सुभाषितप्रशंसा | ५४० |
| धनिप्रशंसा च | ४७८-४८१ | स्निग्धैर्मोहात्स्वजनानां पापं | |
| दरिद्रदुर्दशावर्णनम् | ४८४-४८६ | विशङ्क्यते | ५४२ |
| प्राप्तव्यमर्थं लभते मनुष्यः | ४८८ | इष्टदर्शनाददुःखावेगो- | |
| (४) प्राप्तव्यमर्थवर्णिक- | | अधिको भवति | ५४३ |
| पुत्रकथा | ४८९ | मित्रदर्शनप्रशंसा | ५४४ |
| गुरुपत्नीतत्पुत्रीमित्रभार्यादि- | | भुवनत्रयतिलकधीरवीरप्रशंसा | ५४५ |
| गन्ता ब्रह्महा भवति | ४९२ | सुहृदोऽवश्यं करणीया | |
| मित्रलक्षणम् | ५०२ | विपत्तिनाशाय | ५४६ |
| धननिन्दा, धनिदुर्दशा च | ५०४-०५ | दैवनिन्दा | ५४७ |
| धीरप्रशंसा, उत्साहप्रशंसा च | ५०६-०७ | मित्रसमागमप्रशंसा | ५४९ |
| (५) सोमिलकगुप्तधनादि- | | छिद्रेष्वनर्था बहुलीभवन्ति | ५५१ |
| वैश्यकथा | ५०८ | शुद्धं मित्रं, शुद्धवंशजं कलत्रं | |
| भवितव्यतावर्णनम्, | | च दुर्लभम् | ५५२ |
| दैववर्णनं च | ५१० | मित्रकरणफलम् | ५५३ |
| उद्योगवर्णनम्, दैवस्य | | देहिनां सम्पदः क्षणभङ्गुराः,, | |
| प्रावल्यं च | ५१२ | कायो विनाशी, समागमाश्व | |
| धनवान् सर्वत्र पूज्यते । धन- | | वियोगान्ता भवन्ति | ५५३ |
| प्रशंसा च | ५१८ | छिद्रेष्वनर्था बहुलीभवन्ति | ५५४ |
| (६) वृषभानुग्रहगालकथा | ५१९ | व्यसनस्य प्रतीकार एव भेषजम् | ५५५ |
| उत्साहप्रशंसा | ५२१ | मन्त्रलक्षणम् | ५५६ |

| विषयः | पृष्ठसंख्या | विषयः | पृष्ठसंख्या |
|---|-------------|--|-------------|
| चित्तोत्साहः कार्यस्य सिद्धिम्- सिद्धिं वा कथयति | ५५७ | कृतान्त(दुर्भाग्य)चेष्टितम् विवेकिना मित्रसङ्ग्रहोऽवश्यं कार्यः ५६० | ५५९ ५६० |
| काकोलूकीयं नाम तृतीयं तन्त्रम् | | | |
| वायसराजमेघवर्ण- उलूकराजारिमर्दनयोकथा | | उत्साहवान् लघुरपि गुरुन् हन्ति माययाऽपि शत्रवो हन्तव्याः | ५७७ ५७७ |
| पूर्वविरोधितस्य कदापि | ५६२ | उग्रदण्डाद्राजः शत्रवो बिभ्यति रिपुविनाशोनैव राज्ञः | ५७७ ५७७ |
| विश्वासो नैव कार्यः | ५६२ | प्रशंसा भवति | ५७९ |
| मेघवर्णवायसराजस्य, अरि- मर्दनाख्योलूकराजस्य च | | पलायनकालः | ५७९ |
| विरोधवर्णनम् | ५६३ | आक्रमणकालः । अवस्कन्दः (छापा मारना) | ५७९ |
| शत्रुः प्रवर्द्धमानो नोपेक्ष्यः | ५६४ | परराष्ट्रोपरि आक्रमणं कीदृशेन | ५८० |
| मन्त्रिणा अपृष्टेनापि राजो हितं वाक्यं वक्तव्यम् | ५६६ | कार्यम् | ५८१ |
| बलीयसे प्रणाम एवोचितः | ५६७ | अपसरण(भागने का)समयः ५८२-८३ | |
| सन्धेयो रिपुः | ५६८ | आसनस्य (किले में बैठकर | |
| समेनाऽपि सन्धिर्विधेयः | ५६९ | युद्ध करने का) समयः ५८४-८५ | |
| असन्दधानो मानी विनश्यति | ५७० | निजस्थानस्थितेः प्रशंसा | ५८६ |
| युद्धफलम् | ५७१ | संहतिप्रशंसा | ५८७ |
| स्वयं युद्धं नोत्पादयेत् | ५७२ | सहायकसमाश्रयवर्णनम् | ५८८ |
| बलीयसा समाक्रान्तो वैतसीं वृत्तिमाश्रयेत् | ५७२ | सहायकसङ्गतिफलम् | ५८९ |
| विग्रहं साम्ना प्रशमं नयेत् | ५७३ | सङ्घातवान् समुच्छेतुं न शक्यते | ५९० |
| बलिना सह युद्धं न कुर्यात् | ५७३ | महाजनसम्पर्क उन्नति- | |
| दुष्टेन शत्रुणा सन्धिर्न कार्यः | ५७४ | कारको भवति | ५९१ |
| क्रूरोऽलसः, प्रमादी च रिपुः सुखोच्छेद्यो भवति | ५७२ | स्थिरजीविवचनम् | ५९२ |
| सकोपस्य सामवादा दीपका एव भवन्ति | ५७६ | द्वैधीभावोपदेशः | ५९२ |
| | | शत्रुं वर्द्धयित्वा हन्यात् | ५९३ |
| | | स्त्री-शत्रु-वेश्यादीनामेकभावेन | |
| | | वृत्तिर्न कार्या | ५९३ |

| विषय: | पृष्ठसंख्या | विषय: | पृष्ठसंख्या |
|-----------------------------------|-------------|------------------------------------|-------------|
| देवद्विजगुर्वादीनामेव एक- | | (३) शश-कपिञ्चलककथा | ६ १७ |
| भावेन वृत्तिः कार्या | ५९४ | स्वदेशे, स्वपुरे, स्वगृहे च | |
| धनार्थी राजा एकभावेन न वर्तेत | ५९४ | परमं सौख्यं देहिनाम् | ६ १९ |
| चारै राजानः पश्यन्ति | ५९५ | वापीकूपादीनामुत्सर्गात्परतः | |
| स्वपक्षे, परपक्षे च तीर्थानां | | कस्यापि प्रभुत्वं न भवति | ६ २० |
| वर्णनम् | ५९६-९७ | क्षेत्रादीनां भुक्तिरेव स्वामित्वे | |
| (१) काकोलूकवैरकथा | ६०० | प्रमाणम् | ६ २० |
| अरक्षको राजा यमतुल्य एव | ६०१ | धर्मसंग्रहो नित्यं करणीयः | ६ २२ |
| राजरहिता प्रजा अकर्णधारा | | धर्मशून्यानां जीवनं व्यर्थमेव | ६ २३ |
| नौरिव विप्लवते | ६०१ | धर्महीनाः पशुतुल्या एव नराः | ६ २४ |
| त्याज्याः षट् पुरुषाः | ६०२ | धर्मसर्वस्वकथनम् | ६ २५ |
| उलूकराज्याभिषेकसम्भाराः | ६०३ | अहिंसा प्रथमो धर्मः | ६ २६ |
| नापितादिधूर्त्तर्गणना | ६०४ | पशुधातेन नहि स्वर्गप्राप्तिः | ६ २७ |
| काककृतमुलूकगर्हणम् | ६०५ | साक्षिणा मिथ्याभाषणं कदापि | |
| बहवो राजानः प्रजानां | | न कार्यम् | ६ २८ |
| विपत्तय एव भवन्ति | ६०६ | न्यायनिर्णेत्रा (जज) लोभादिना- | |
| महतां नामग्रहणेनापि | | न्यथा निर्णयो न कार्यः | ६ २८ |
| विपदो दूरीभवन्ति | ६०७ | सभा(न्यायालय)मध्ये | |
| महतां नामग्रहणेनापि | | सत्यभाषणमेव कार्यम् | ६ २९ |
| विपदो दूरीभवन्ति | ६०७ | उलूकवायसयोः सान्वयं | |
| (२) शश-गजयूथकथा | ६०७ | वैरमेतत्प्रभृति जातम् | ६ ३१ |
| आत्मरक्षार्थ राजा सर्वमपि त्यजेत् | ६१० | दुरुक्तं वाक्क्षतं न प्रोहति | ६ ३२ |
| निर्विषेणापि सर्पेण महती | | बुद्धिमता निष्कारणं, निरर्थकं | |
| फटा कर्तव्या | ६११ | च वचो न वाच्यम् | ६ ३३ |
| दूतलक्षणम् | ६१२ | बलवानपि नरो विरोधं | |
| मूर्खदूतनिन्दा | ६१३ | वृथा न वर्द्धयेत् | ६ ३३ |
| परुषवादिनोऽपि दूता अवध्या | | परापवादः सभामध्ये विदुषा | |
| भवन्ति | ६१४ | न कदापि वाच्यः | ६ ३३ |

| विषयः | पृष्ठसंख्या | विषयः | पृष्ठसंख्या |
|--------------------------------------|-------------|--|-------------|
| (४) धूर्तत्रियवच्छित्तब्राह्मणकथा | ६३५ | अतिथिपूजनं गृहस्थानां | |
| स्नानकुकुटगद्भोष्टादयो | | परमो धर्मः | ६३५ |
| न स्वेष्टव्याः | ६३७ | दाचित्यादिकं स्वकृतपापानामेव | |
| मृतकं न स्वृशेत्, शवस्यर्थो | | फलम् | ६३६ |
| पञ्चगव्येन शुद्धिः | ६३८ | आत्मना कृतं पापमात्मनैव भुज्यते | ६३९ |
| गर्दधस्यर्थो सचैतं स्नानमाचरेत् | ६३९ | पापी महायोरे नरके पतति | ६३९ |
| (५) पिपीलिकाहतसर्पकथा | ६४० | या त्वी पतिं मृतमनुगच्छति | |
| वहवो न विरोद्धव्याः | ६४१ | साऽनन्तं कालं स्वर्णे वसति | ६४२ |
| अपसारवुक्तं दुर्गे प्रशस्यते, | | (९) चौर-वृद्धविणिकद्वयूकथा | ६४४ |
| तदभावे तु दुर्गं वन्धनमेव | ६४३ | पुंसां केशानां श्वैत्यं दृष्ट्वा तरुण्यो | |
| मृत्यानां प्राणवद्रक्षणं युद्धायमेव | ६४४ | दृगदेव तान् परित्यजन्ति | ६४५ |
| दुर्गाश्रितः शत्रुदुर्जयो भवति | ६४७ | जगन्नितपुरुषदशावर्णन् | ६४६ |
| कार्यानारम्भः प्रथमं वृद्धिमत्त्वं, | | (१०) चौर-राक्षस-ब्राह्मणकथा | ६४९ |
| समारब्धस्य कार्यस्य सफलं | | (११) वल्मीकोदरस्य- | |
| समापनं द्वितीयं वृद्धिमत्त्वं | ६४८ | सर्पद्वयकथा | ६४४ |
| वलीवसा विरोधं नैव कुर्यात् | ६५० | प्रत्यक्षेऽपराधे कृतेऽपि मूर्खः | |
| (६) ब्राह्मणसर्पकथा | ६५३ | साम्ना प्रशास्याति | ६४९ |
| (७) स्वर्णहंस-स्वर्णपक्षि- राजकथा | ६५६ | (१२) रथकार-वधू-जारकथा | ६९० |
| (८) कपोतलुब्ध्यककथा | ६६० | त्वीणां सतीत्वं नितरां दुर्लभम् | ६९० |
| यस्य त्वी पतिव्रता भवति स | ६६३ | लोकः सर्वं वेति | ६९१ |
| पुमान् धन्यः | | व्यभिचारिणीनां दुर्दिवसादौ | |
| गृहिणीं विना गृहमरण्यसदृशं | | परमसुखं भवति | ६९२ |
| भवति | | त्वीचरित्रम् | ६९२-९७ |
| या नारी भर्तारं न तोषयति सा | | राजामप्राज्ञैर्मन्त्रिभिः कार्याणि | |
| न त्वी, किन्तु सा गक्षसी | | विनशयन्ति | ६९९ |
| यस्यां नार्या भर्ता न तुष्यति | ६६४ | (१३) कन्यामूषकविवाहकथा | ७०१ |
| तस्या जीवनं वृथैव | ६६४ | त्वीणां दोषो न विद्यते । त्वियो | |
| | | हि निष्पापा भवन्ति | ७०३ |

| विषय: | पृष्ठसंख्या | विषय: | पृष्ठसंख्या |
|--------------------------------|-------------|-------------------------------------|-------------|
| अष्टवर्षायाः कन्याया विवाहः | | (१६) मण्डूकमन्दविषसर्पकथा | ७३५ |
| प्रशस्तः | ७०४ | (१७) घृतान्ध्राह्यणकथा | |
| ऋतुमत्याः कन्याया विवाहे दोषः | ७०५ | महत्स्वभाववर्णनम् | ७४५ |
| वृषली कन्या सत्वरं यथालाभं | | प्रारब्धं कार्यमुत्तमजना मध्ये | |
| वराय प्रदेया | ७०६ | न त्यजन्ति | ७४६ |
| वरगुणाः | ७०६ | प्रज्ञाहताः शत्रव एव सुहता | |
| (१४) सुवर्णपुरीषपक्षि - राज- | | भवन्ति | ७४७ |
| मन्त्रिकथा | ७१३ | भविष्यतः पुंसः शुभे कर्मणि | |
| अनागतं यः कुरुते स शोभते | ७१७ | स्वयं प्रवृत्तिर्भवति | ७४८ |
| (१५) सिंह-जम्बुकगुहाकथा | ७१८ | अध्यवसायभीरूणां पदे पदे | |
| भयसन्त्रस्तमनसां दशाया वर्णनम् | ७१९ | उपहास एव भवति | ७५१ |
| कुमन्त्रप्रदातारो हि मन्त्रि- | | दृष्टपलायितसर्पे गृहे निद्रा दुःखेन | |
| व्याजेन शत्रव एव | ७२२ | लभ्यते | ७५२ |
| दैवोपहतपुरुषदशा | ७२२ | कार्याणां समाप्तिं विना मनस्विनां | |
| शीघ्रं करणीये कार्ये विलम्बेन | | हृदि शान्तिर्न भवति | ७५३ |
| तद्रसो नश्यति | ७२४ | प्रजारञ्जनं विना राज्यं निरर्थकम् | ७५४ |
| पाण्डवदशावर्णनेन काले यथा- | | चिरं राज्यश्रिय उपभोगे गुणा- | |
| चितं कार्यं करणीयमिति | | नुरागादिकं हेतुः | ७५४ |
| प्रदर्शनम् | ७२६ - ३० | राज्यश्रीस्वभाववर्णनम् | ७५५ |
| आत्मा सर्वप्रयत्नेन रक्षणीयः | ७३२ | कालमाहात्म्यम् | ७५७ |
| साधारणनीतिवर्णनम् | ७३३ | कालस्य प्राबल्यम् | ७५८ |
| अपमानं पुरस्कृत्यापि स्वकार्यं | | कालेन महान्तो नृपतयः कृताः, | |
| साधनीयम् | ७३४ | विनाशिताश्च | ७५८ |

लब्धप्रणाशं नाम चतुर्थं तन्त्रम्

| | | | |
|------------------------------------|-----|-------------------------|-----|
| रक्तमुखवानर-करालमुखमकरकथा | ७६३ | मंकरीकोपोपालम्भवचनम् | ७६६ |
| अतिथिपूजनस्यावश्यकत्वम् | | मकरकृतं मानिनीप्रसादनम् | |
| सोदर्याद्ध्रातुरपि वाक्प्रतिंपत्रो | | मानिनीमकरीकृत उपालम्भः | ७६७ |
| प्राताऽधिकः | ७६५ | कृतघ्ने निष्कृतिर्नस्ति | ७७० |

| पृष्ठसंख्या | विषयः | पृष्ठसंख्या |
|-------------|---|-------------|
| ७७१ | प्राणत्यागावसरेऽपि आपृत्य नैव करणीयम् | ६१० |
| ७७५ | एकेनापि धीरेण सोत्साहेन गटेन सैन्यं सोत्साहं भवेत् | ६११ |
| ७७७ | (५) ब्राह्मणी- तज्जारकथा | ६१२ |
| ७७७ | (६) नन्द- वररुचिकथा | ६१३ |
| ७७९ | स्त्रीभिरभ्यर्थितो नरः किं किं न कुर्यात् | ६१३ |
| ७८० | आत्मनो मुखदोषेण वध्यन्ते | ६१५ |
| ७८१ | शुकसारिका: | ६१६ |
| ७८२ | (७) वाचालरासभकथा | ६१७ |
| ७८६ | माता, प्रियवादिनी स्त्री च यस्य गृहे नास्ति तेन वने एव गन्तव्यम् | ६१९ |
| ७८७ | दुष्टस्त्रीनिन्दा, स्त्रीस्वभावाख्यानं च | ६२० |
| ७८८ | (८) हालिकवधू- वञ्चक- | |
| ७९२ | शृगालिकाकथा | ६२३ |
| ७९४ | वामे विधौ सर्वमिदं नराणाम् | ६२९ |
| ७९७ | निजमङ्गलकामिनः स्वापे- | |
| ७९८ | क्षया श्रेष्ठजनान् पृष्ठवा कार्य करणीयम् | ६३१ |
| ८०१ | सतां सदुपदेशमगृह्णतां विनाशो भवति | ६४१ |
| ८०३ | (९) घण्टोष्ट्रकथा | ६४१ |
| ८०५ | उपदेशप्रदातृणां तथा परहित- मिच्छतां जनानां कदाचिदपि | ६४७ |
| ८०९ | विपत्तिर्न भवति | |
| ८१० | स्वोपकारमनपेक्ष्यैव केवलं परहित- साधने तृत्यरो भवति स एव साधुः | ६४७ |

| विषयः | पृष्ठसंख्या | विषयः | पृष्ठसंख्या |
|-------------------------------------|-------------|----------------------------|-------------|
| सामादिचतुष्कस्य महत्त्वम् | ८४८ | शालिनोऽपि वीरपुरुषः | ८५१ |
| (१०) शृगाल-सिंह-व्याघ्र- | | भेदनीत्या वश्यतां नीयन्ते | ८५१ |
| चित्रककथा | ८४८ | स्वजातीयात् भयं सम्भाव्यम् | ८५६ |
| सत्कुलप्रसूता जना विपदाक्रान्ता अपि | | (११) विदेशगतसारमेयकथा | ८५७ |
| न्यायपथं न त्यजन्ति | ८५० | समानजातयः अन्योऽन्यस्य | |
| प्राणान्तोऽपि प्रकृतिविकृतिर्जायते | | अशनवसनादेः प्राचुर्यं न | |
| नोत्तमानाम् | ८५० | सहन्ते | ८५९ |
| सामादिषु भेदस्य प्रतिपादनम् | ८५१ | परपौरुषलभ्यसम्पदभोगिनस्तु | |
| मौक्तिकबन्धनवत् बहुसहाय- | | नराः शक्तिहीनवृद्धवृष एव | ८६० |

अपरीक्षितकारकं नाम पञ्चमं तन्त्रम्

| | | | |
|-------------------------------------|-----|-----------------------------------|-----|
| पद्मनिधि क्षणिक-धर्मा- | | वृद्धावस्थायामपि केवला तृष्णैव | |
| धिकारिकाणांकथा | | नवीभवति | ८७५ |
| विदुषाजनेन सम्यक् प्रकारेण | | अपरीक्ष्यकार्यकरणे केवलमनुताप | |
| विचार्यैव सर्वं कार्यं करणीयम् | ८६१ | एव फलम् | ८७८ |
| दरिद्रस्य सन्तोऽपि बहवः | | (१) ब्राह्मणी-नकुलकथा | ८७८ |
| गुणाः धनाभावादेव सर्वैरना- | | पुत्रो ग्रदृश एव भवतु पित्रोः | |
| दृतत्वात् विकाशं नैव लभन्ते | ८६३ | सदैव हृदयहर्षप्रद एव | ८७९ |
| अस्मिन् संसारे धनराहित्यमेव | | पुत्रशरीरस्य संस्पर्शश्वन्दनादपि | |
| लाघवबीजं, न तु ज्ञानकुल- | | शीतलः | ८७९ |
| सामाजिकतादिराहित्यम् | ८६६ | पुत्रस्य स्नेहबन्धनं सर्वबन्धनात् | |
| व्याधिचिन्तादिग्रस्तमनुष्येण दृष्टं | | दुश्छेद्यम् | ८८० |
| स्वप्नं निरर्थकम् | ८६८ | कियत्कालं क्लेश एवात्र | |
| सर्वथाऽवरणविलये चेतनस्व- | | लुब्धदण्डः | ८८२ |
| रूपाविर्भावः | ८७० | (२) लोभाविष्टसिद्धिच्युत- | |
| केनचित् उपासकेन जिनबुद्धदेवस्य | | चक्रधरकथा | ८८२ |
| स्तुतिः | ८७१ | बन्धुबान्धवानां मध्ये धनहीन- | |
| सर्वत्यागिनां दिगम्बराणामपि | | जीवनं निरर्थकम् | ८८२ |
| धनतृष्णा न अपैति | ८७५ | निर्धनता हि सर्वापदां स्थानम् | ८८३ |

| पृष्ठसंख्या | विषय: | पृष्ठसंख्या |
|--------------------------------------|------------------------------------|-------------|
| | विषय: | |
| धनमेव हि कीर्तिमानयोर्निर्दानम् ८८४ | अपि पुरुषः उपहा | |
| जीवन्नपि दरिद्रो मृत एव ८८४ | (४) लोकव्यवहारज्ञानशून्यपूर्खः १०१ | |
| चिन्ताकुलीकृतमतिः पुरुषः सर्व ८८५ | पण्डितचतुष्टय कथा | |
| त्यक्त्वा विदेशं गच्छति ८८५ | सास्पदत्वं यान्ति १०२ | |
| अध्यवसायि नरः कार्यसाधनावसरे | (५) यो विपद्युत्सवे च सहैव १०२ | |
| स्वदेहैः दुर्लभानि वहूनि धनानि | वर्तते स एव बान्धवः १०२ | |
| प्राप्यन्ते ८८७ | पण्डितो जनः सर्वनाशे १०३ | |
| पुरुषार्थस्य दैवादपि महत्त्व- | समुपस्थिते अर्ध त्यजति १०४ | |
| प्रतिपादनम् ८८७ | सुदैवमेव सर्वोपरि वर्वतीति १०५ | |
| दैवस्य बलवत्त्वेऽपि पुरुषकार- | निरूपणम् १०६ | |
| स्यापि बलवत्त्वनिरूपणाम् ८८८ | दैवस्य अनुकूलता-प्रतिकूल- | |
| महतां पुरुषाणां विस्मयकरचरित्र- | तावर्णनम् १०७ | |
| निरूपणम् ८८८ | (६) शतबुद्ध्यादिमत्स्यकथा १०८ | |
| न मुखं सुप्तेनेति, उद्योगेनैव | दुष्टचेतसां मनुष्याणां मनोरथा | |
| समीहितसिद्धिः ८८९ | न सिध्यन्ति ११० | |
| पुरुषेण सर्वदैवोत्साहवता भाव्यम् ८८९ | जगति बुद्धिमतां बुद्धेः किमपि | |
| पुरुषार्थस्य महत्त्वप्रतिपादनम् ८९० | अगम्यं नास्ति ११० | |
| श्रेष्ठजना एव महत्कार्यं सम्पादयितुं | जन्मभूमेः महत्त्वप्रतिपादनम् १११ | |
| समर्थाः ८९० | स्वकृतकर्मणो विपाकवर्णनम् ११४ | |
| अधीतविद्याऽपि बुद्धिहीना जना | (७) गीतपररासभ-शृगालकथा ११४ | |
| विनश्यन्ति ८९७ | चौरजारैर्निःशब्दैः स्थातव्यम् ११६ | |
| (३) सिंहकारक-मूर्खब्राह्मण- | अकृतपुण्यसम्पदां न खलु ११७ | |
| त्रयकथा | सङ्गीतरसास्वादः सम्भवति ११७ | |
| तत्त्वाद्या किं प्रयोजनं या केवलं | गीतस्य भेदाः ११८-११९ | |
| निजभोगार्थमेव भवति ८९८ | कुकुराश्वगर्दभाणां प्रहारजन्यपीडा | |
| उदारचरितानां तु वसुधैव | क्षणात्परं न तिष्ठेत् १२० | |
| कुटुम्बकम् ८९९ | यस्य स्वबुद्धिर्नास्ति तस्य | |
| लोकव्यवहारबुद्धिशून्याः शास्त्रज्ञा | बन्धुवाक्यं समादरेत् १२१ | |

| (८) विश्वामित्र-कथा | पृष्ठसंख्या | विश्वामित्र-कथा | पृष्ठसंख्या |
|-------------------------------------|-------------|---------------------------------------|-------------|
| ददादेनो लक्ष्मीनाथकर्त्तव्य- | १२३ | ददादेनो कार्त्तव्याविवेद- | |
| विश्वामित्र-कथा लक्ष्मीनाथ- | | नाभिर्व निरमधुतिकं परित्यज्य | |
| ग्रामीणकथा | १२४ | स्यानादेव गनने श्रेयः | १३८ |
| लक्ष्मीनाथ न कदाचि न गम्या | | विश्वामित्र-कथा प्रस्त्व | |
| कुरुन् | १२५ | यो नर ईशद् लोभादिता वा | |
| लद्गृहे त्री-काम-कुरुनो सत्त्वार्थं | | अन्वकृतं स्वरंशपरभवं क्षेत् | |
| लद्गृहे नार्या ग्रामीण | १२६ | स पुरुषाद्वयो ज्ञेयः | १४१ |
| विश्वामित्र-कथा एव, केवल | | धनिनो गमि तृष्णादा अकृत्येषु | |
| कुरुन्देव लक्ष्मी | १२७ | वत्सेन योज्यते | १४५ |
| वास्त्र-वाट-नीच-नीच- | | सर्वे ननु याः तृष्णादा एव | |
| वामदण्ड-कुरुन्देव लक्ष्मी | | वशीभूताः सन्ति | १४५ |
| लक्ष्मी न कुरुन् | १२८ | सर्वे ननु याः तृष्णादा एव | |
| विश्वामित्र-कथा लक्ष्मीनाथ | | वशीभूताः सन्ति | १४५ |
| विश्वामित्र | १२९ | वृद्धावस्थायामेव केवला तृष्णीव | |
| विश्वामित्र-कथा लक्ष्मीनाथ | | तद्विवाचरति | १४५ |
| लक्ष्मी न इच्छेत् | १३० | शटे शान्त्वं समाचरेत् | १४७ |
| अनुपमित्र-कथा लक्ष्मीनाथं च | | आपचित्रलं मित्रं न त्यजेत् | १४८ |
| विश्वामित्र-कथा न कर्णीयम् | १३१ | (११) विकालराक्षस-वानरकथा १४९ | |
| (९) धारिदोयगदीपितृकथा | | प्रधृतपुरुषकारसम्पत्तानामपि दैवप्रति- | |
| विश्वामित्र-कथा लक्ष्मीनाथ | | कृत्वेन कालवशङ्गता दृश्यते १५५ | |
| केवलं लोभद् लक्ष्मी न कर्णीयम् १३३ | | (१२) अन्यक-कुञ्जक- | |
| (१०) वानरविद्विष्विद्वचन्द्रभूपति- | | त्रिस्तनीकथा १५५ | |
| कथा | १३४ | पृच्छकेन सदा धाव्यं पुरुषेण | |
| वद्गृहे निहेनुकं सततं कलहं भवेत् | | विजानता १५७ | |
| लद्गृहे दृष्ट एव परित्यजेत् १३५ | | (१३) राक्षसगृहीतद्राह्मणकथा १५७ | |
| वामदण्ड दुष्परिणामानि | १३६ | हीनाङ्गी वा अधिकाङ्गी वा | |
| वामदण्ड वृद्धस्य च विचारणीये | | त्रिस्तनी कन्या स्वभर्तारं वा | |
| विश्वे प्रतिनं विकाशते | १३७ | स्वपितरं विनाशयति १५९ | |

| विषयः | पृष्ठसंख्या | विषयः | पृष्ठसंख्या |
|--------------------------------|-------------|--------------------------------|-------------|
| लज्जास्नेहादिचिन्ता उदरपात्रे | १५४ | पथि भीरुरपि सुखप्रदः | १६१ |
| पूर्णे एव प्राणिनां सम्पवन्ति | १६१ | (१५) पान्थब्राह्मण- | १६१ |
| यथा वह्यादीनां शीतलत्वादिकं | १५५ | कर्कटककथा | १७० |
| अतीवासम्भवं तथा स्त्रीणामपि | १५६ | सम्पदभिलाषिभिः सर्वैव ससहा- | १७१ |
| सतीत्वम् | १६२ | यैर्भवितव्यम् | १७२ |
| एकताविरहिता मनुष्या विनश्यन्ति | १६६ | यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति | १७२ |
| (१४) एकोदरभारुण्डकथा | १६६ | तादृशी | १७३ |
| एकाकिनः निषिद्धानि कर्माणि | १६९ | | |